|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

## || श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

**अध्याय 4: ज्ञानकर्मसंन्यासयोग**

4/4 (श्लोक 25-42), शनिवार, 30 जुलाई 2022

**विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल**

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/r21lwC840Fg

# कर्म योग में यज्ञ का महत्व

भारतीय संस्कृति की परंपरानुसार ईश् स्तुति, दीप प्रज्वलन एवं गुरु चरण वंदन करते हुए आज के इस विवेचन सत्र का आरंभ हुआ। यह गीता का अत्यंत महत्वपूर्ण अध्याय है। अगर कोई थोड़े में गीता को समझना चाहता हो तो, इस अध्याय को ध्यान से समझना चाहिये। हर इंसान के युद्ध अलग अलग होते हैं। वैसे ही यज्ञ भी अलग अलग तरह के होते हैं। गीता में बारह प्रकार के यज्ञों के बारे में बताया गया है। वेदों में तो सौ से भी ज़्यादा यज्ञों के बारे में बताया गया है। भगवान ने इन बारह यज्ञ के भी दो विभाग किये हैं :

**ब्रह्म यज्ञ एवं देव यज्ञ**

**4.25**

**दैवमेवापरे यज्ञं(म्), योगिनः(फ्) पर्युपासते।**
**ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं(म्), यज्ञेनैवोपजुह्वति॥25॥**

अन्य योगी लोग दैव (भगवदर्पण रूप) यज्ञ का ही अनुष्ठान करते हैं (और) दूसरे (योगी लोग) ब्रह्म रूप अग्नि में (विचार रूप) यज्ञ के द्वारा ही (जीवात्मा रूप) यज्ञ का हवन करते हैं।

विवेचन : इस श्लोक में भगवान ने दो यज्ञ बताये हैं ;

दैव यज्ञ - किसी भी क्रिया या पदार्थ में थोड़ा सा भी लगाव या इच्छा ना रखते हुए और देव पूजन को, भगवान के लिए है अर्थात अपना कर्तव्य मानते हुए करना देव यज्ञ कहलाता है। कुछ लोग देवी देवता को सब कुछ मान अपने यज्ञ को कर्तव्य समझ कर देवी देवता को समर्पित करते हैं |

आत्म संयम यज्ञ - **एक ब्रह्म दूसरा नास्ति।** कुछ योगी ब्रह्म को ही सबसे बड़ा सत्य मान उन्हें सब कुछ सौंप देते हैं। उनका सब कार्य भगवान को समर्पित होता है। इसे आत्म संयम यज्ञ कहते हैं।

**4.26**

**श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये, संयमाग्निषु जुह्वति।**
**शब्दादीन्विषयानन्य, इन्द्रियाग्निषु जुह्वति॥26॥**

अन्य (योगी लोग) श्रोत्रादि समस्त इन्द्रियों का संयम रूप अग्नियों में हवन किया करते हैं (और) दूसरे (योगी लोग) शब्दादि विषयों का इन्द्रिय रूप अग्नियों में हवन किया करते हैं।

विवेचन : इस श्लोक में भगवान इंद्रिय संयम यज्ञ और विषय हवन रूप यज्ञ के बारे में बताते हैं। संयम रूपी अग्नि में इंद्रियो की आहुति देना यज्ञ कहा गया है। इसका अर्थ है योगी को इंद्रियों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध) के रस की और लगाव ना होना। प्रत्येक इंसान में इनमें से एक रस की प्रधानता होती है। भगवान कहते हैं । इन रसों में अनासक्ति इंद्रिय संयम यज्ञ है। विषय हवन रूप यज्ञ अर्थात **गुणा गुणेषु वर्तन्ते।**
अपने सभी कर्मों को दृष्टा भाव से देखना, उनमें लिप्त ना होना। जैसे पेट को भूख लगी है, मुँह खा रहा है परन्तु मैं केवल दृष्टा हूँ। ऐसा मानना यह विषय रूप हवन यज्ञ है।

**4.27**

**सर्वाणीन्द्रियकर्माणि, प्राणकर्माणि चापरे।**
**आत्मसंयमयोगाग्नौ, जुह्वति ज्ञानदीपिते॥27॥**

अन्य (योगी लोग) सम्पूर्ण इन्द्रियों की क्रियाओं को और प्राणों की क्रियाओं को ज्ञान से प्रकाशित आत्मसंयमयोग रूप (समाधियोग) रूप अग्नि में हवन किया करते हैं।

विवेचन : अन्त कर्म संयम यज्ञ - प्राण द्वारा मन को संयम करना। पतंजलि के अष्टांग योग के अनुसार हम एक दिन में 21600 और एक मिनट में 15 बार श्वास लेते है। हमारी आयु का निर्धारण हमारी श्वासों के अनुसार किया जाता है। श्वासों की गति अधिक होना रोग का प्रमाण है। जितनी श्वास गति कम होगी हम उतने ही स्वस्थ और निरोगी होंगे।अधिक सोने से भी आयु कम होती है क्योंकि सोते समय हमारी सांसों की गति तेज होती है। श्वासों पर संयम करके बड़ी बड़ी सिद्धि प्राप्त हो सकती है जैसे मीरा बाई ,कबीर और तुलसी दास आदि। ये आरम्भ से कवि नही थे। इनका कवियत्र सिद्ध हो गया था। श्वास को रोककर वाल्मीकि ऋषि ने ऐसी तपस्या की कि चींटियों ने उन पर बाम्बी बना ली। इसिलिए उनका नाम वाल्मीकि पड़ा।

श्वसन क्रिया के तीन भाग हैं

रेचक - श्वास छोड़ना

पूरक - श्वास लेना

कुम्भक - श्वास रोकना

कुम्भक के भी दो भाग हैं : अंतः कुम्भक अर्थात् श्वास को भीतर रोकना तथा बाह्य कुम्भक अर्थात् श्वास को बाहर की और रोकना।

योग अभ्यास द्वारा श्वसन की गति को कम किया जा सकता है। इससे विभिन्न सिद्धियों की प्राप्ति होती है जिनसे कवित्व भी एक सिद्धि है।

**4.28**

**द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा, योगयज्ञास्तथापरे।**
**स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च, यतयः(स्) संशितव्रताः॥28॥**

दूसरे (कितने ही) तीक्ष्ण व्रत करने वाले प्रयत्नशील साधक द्रव्यमय यज्ञ करने वाले हैं (और दूसरे कितने ही) तपोयज्ञ करने वाले

हैं और (दूसरे कितने ही) योग यज्ञ करने वाले हैं तथा (कितने ही) स्वाध्यायरूप ज्ञान यज्ञ करने वाले हैं।

विवेचन : इस श्लोक  में 6 प्रकार के यज्ञ बताए गए  हैं।

द्रव्य यज्ञ -पैसे खर्च करके और वस्तुओं से संसार के हित के लिए कर्य करना।  यह यज्ञ सबसे सरल है जैसे करोना काल में लोगों ने खाना, दवाइयाँ बाँटी, कुछ लोग सर्दी में कम्बल आदि बाँटते है।

तपो यज्ञास - भग्वद् प्राप्ति हेतु धर्म का पालन करने में जो मुश्किलें आती हैं ,उन्हें प्रसन्नता पूर्वक सहन कर लेना। प्रतिकूल परिस्थिति,स्थान, वस्तु , व्यक्ति, घटना आने पर भी धैर्यपूर्वक अपने नियमों का पालन करना सबसे बड़ी तपस्या है।  ये तपस्या जल्दी सिद्धि देने वाली होती है।

**सीताराम सीताराम कहिये ॥**

**जाही विधि राखे राम ताहीं विधि रहिए॥**

योग यज्ञ - अपने हर कर्म में भगवान को जोडकर रखना। जो कुछ हो रहा है वह उनकी इच्छा से ही हो रहा है। यह मानना योग यज्ञ है।

पंच व्रत यज्ञ - सत्य, अहिंसा, अस्तेय , ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इन पाँचों नियमों का सूक्ष्मता पूर्वक पालन करना पंच व्रत यज्ञ कहलाता है।

स्वाध्याय यज्ञ -  वेद, उपनिषद आदि ग्रंथो को पढ़कर अथवा गुरु आज्ञा को श्रद्धा पूर्वक मानकर किसी भी साधन में स्वयं को नियम पूर्वक लगाना।

**4.29**

**अपाने जुह्वति प्राणं(म्), प्राणेऽपानं(न्) तथापरे।**
**प्राणापानगती रुद्ध्वा, प्राणायामपरायणाः॥29॥**

दूसरे (कितने ही) प्राणायाम के परायण हुए (योगी लोग) अपान में प्राण का (पूरक करके) प्राण और अपान की गति रोककर (कुम्भक करके) (फिर) प्राण में अपान का हवन (रेचक) करते हैं; तथा अन्य (कितने ही) नियमित आहार करने वाले प्राणों का प्राणों में हवन किया करते हैं। ये सभी (साधक) यज्ञों द्वारा पापों का नाश करने वाले (और) यज्ञों को जानने वाले हैं। (4.29-4.30)

**4.30**

**अपरे नियताहाराः(फ्), प्राणान्प्राणेषु जुह्वति।**
**सर्वेऽप्येते यज्ञविदो, यज्ञक्षपितकल्मषाः॥30॥**

विवेचन : ज्ञान मार्ग के योगियों के लिए यह एक बहुत उत्तम श्लोक है। कुछ योगी अपान वायु मे प्राण वायु का हवन करते हैं, कुछ योगी प्राण वायु में अपान वायु का हवन करते है, अन्य योगी प्राण और अपान की गति रोक कर प्राणायाम परायण होते हैं। पाँच तरह के प्राण होते हैं।  हमारे यहाँ पंच प्राण का विधान है।

1.**प्राण** -  प्राण यज्ञ

स्थान - अनाहत हृदय चक्र

क्रिया - रेचक, पूरक, कुम्भक

उप प्राण - नाग

क्रिया - हिचकी ,ढकार आदि

2. **उदान**

स्थान - विशुद्ध कण्ठ चक्र

क्रिया - भोजन,जल ग्रहण करना

भोजन किसी भी अवस्था में किया जाये परन्तु वह अपने नियत मार्ग से ही होता हुआ आगे बढ़ता है। और यह निर्धारित करने का कार्य उदान प्राण करता है।

उप प्राण - देवदत्त

क्रिया - जम्हाई ,अंगड़ाई

3. **अपान**

स्थान - मूलाधार चक्र

क्रिया मल - मूत्र, वीर्य,बलगम आदि का त्याग, प्रसव

उप पप्राण - कूर्म यह हमारी पलकों में निवास करता है।

क्रिया - आँखें खोलना ,बंद करना

4.**समान**

स्थान - मणिपूरक नाभि चक्र

क्रिया - सप्त धातुओं को संतुलित करना (रक्त,माँस, मज्जा,अस्थि, वीर्य और तेज़ हमारे शरीर में साढ़े तीन लीटर खून होता है। और यह इतना ही रहे इसका और अन्य सभी धातुओं के संतुलन का कार्य समान प्राण करता है।

उप प्राण - कृन्कल

क्रिया - भूख प्यास का अनुभव

5.**व्यान**

स्थान - स्वाधिष्ठान चक्र

क्रिया - रक्त संचालन - शरीर की प्रत्येक नस में रक्त की गति का संचालन करना।

उप प्राण - धनन्जय
यह शरीर को सबसे अंत में छोड़ता है।

क्रिया - प्रत्येक अंग को साफ़ रखना

अंगों में गंदगी को एकत्र कर उसे साफ करने की प्रेरणा देना।

https://drive.google.com/file/d/1JujG9yF3SgTAHN27OxyFbqBSUaQq9o2N/view?usp=sharing

इन प्राण गति को नियंत्रित करना प्राण यज्ञ है।

नियम से आहार विहार करने वाले प्राणो का प्राणो में ही हवन करते हैं। प्राणायाम परायण पुरुष प्राणायाम सेअपने को संयम करने में सफल होते हैं। ऐसे साधक पाप का नाश करने वाले तथा यज्ञों को जानने वाले होते हैं।

**4.31**

**यज्ञशिष्टामृतभुजो, यान्ति ब्रह्म सनातनम्।**
**नायं(म्) लोकोऽस्त्ययज्ञस्य, कुतोऽन्यः(ख्) कुरुसत्तम॥31॥**

हे कुरुवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! यज्ञ से बचे हुए अमृत का अनुभव करने वाले सनातन परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते हैं। यज्ञ न करने वाले मनुष्य के लिये यह मनुष्य लोक (भी) (सुखदायक) नहीं है, (फिर) परलोक कैसे (सुखदायक होगा)?

विवेचन : सामान्य देव यज्ञ करते समय जो हवन सामग्री हवन कुंड से बाहर गिर जाती है उसे यज्ञ शेष कहते हैं। और जो इन बारह यज्ञों से संसार की सेवा करके सब कुछ सब को दे देता है और जो कुछ बचता है वो उसे अमृतकी तरह ग्रहण करता है, ऐसा मनुष्य परमब्रह्म को प्राप्त होता है। जो व्यक्ति यज्ञ नही करते उन्हें दुबारा मनुष्य शरीर नही मिलता। उन्हें मनुष्य लोक में सुख नही मिलता फिर किसी और लोक में सुख कैसे मिलेगा। जो जीवन व्यष्टि में व्यतीत करता है उसे इहलोक और परलोक कहीं पर भी सुख नहीं मिलता। और जो समष्टि भाव से जीवन जीता है, उसे हर लोक में सुख प्राप्त होता है।

**4.32**

**एवं(म्) बहुविधा यज्ञा, वितता ब्रह्मणो मुखे।**
**कर्मजान्विद्धि तान्सर्वान्, एवं(ञ्) ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे॥32॥**

इस प्रकार (और भी) बहुत तरह के यज्ञ वेद की वाणी में विस्तार से कहे गये हैं। उन सब यज्ञों को (तू) कर्मजन्य जान। इस प्रकार जानकर (यज्ञ करने से) (तू कर्म बन्धन से) मुक्त हो जायगा।

विवेचन : भगवान कहते हैं। इस प्रकार बहुत से यज्ञ वेदों में कहे गये है। वे कोई भी हो सकते हैं, परंतु उनमें दृष्टि जब समष्टि भाव की होगी तो परिणाम वैसा ही होगा और उनके अनुष्ठान से मनुष्य कर्म बंधन से हमेशा हमेशा के लिए छूट जाते हैं।

**4.33**

**श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्, ज्ञानयज्ञः(फ्) परन्तप।**
**सर्वं(ङ्) कर्माखिलं(म्) पार्थ, ज्ञाने परिसमाप्यते॥33॥**

हे परन्तप अर्जुन ! द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है। सम्पूर्ण कर्म (और) पदार्थ ज्ञान (तत्त्वज्ञान) में समाप्त (लीन) हो जाते हैं।

विवेचन : गीता में 12 तरह के यज्ञ बताए गये हैं। द्रव्य यज्ञ कुछ पाने के लिए होता है ये यज्ञ भी अच्छा होता है भगवान ने इसकी अवहेलना नहीं की है। परंतु ज्ञान यज्ञ इससे श्रेष्ठ है। पर यह ज्ञान यज्ञ इतना आसान नहीं है।

**4.34**

**तद्विद्धि प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन सेवया।**
**उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं(ञ्), ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥34॥**

उस (तत्त्वज्ञान) को (तत्त्वदर्शी ज्ञानी महापुरुषों के पास जाकर) समझ। (उनको) साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करने से, (उनकी) सेवा करने से (और) सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी (अनुभवी) ज्ञानी (शास्त्रज्ञ) महापुरुष (तुझे उस) तत्त्वज्ञान का उपदेश देंगे।

विवेचन ; गीता का यह अत्यंत उत्तम श्लोक है। भगवान ने यहाँ गुरु की शरण में जाने को कहा है। वे स्पष्ट कहते हैं कि सिद्धि के लिये मनुष्य को तत्वदर्शी महात्मा के पास जाना होगा। दो प्रकार के ज्ञान होते हैं :

**सामान्य ज्ञान और तत्व ज्ञान।** किसी भी वस्तु का नाम और रूप जानना सामान्य ज्ञान है। सामान्य व्यक्ति की दृष्टि इसी प्रकार की होती है। परन्तु किसी भी वस्तु को केवल ज्ञान से नही बल्कि तत्व से भी जानना ज़रूरी है। जैसे सुनार जब किसी गहने को देखता है तो वो ये नही देखता कि ये कंगन है, हार है,बाली है या अँगूठी है वो तो ये देखता है कि सोना है। किस प्रकार का है? कितने वज़न का है?

हमारी दृष्टि नाम और रूप पर होती है। हम वो नही देखते जो सुनार देखता है। उसकी तत्व दृष्टि है। वैसे ही सिद्ध महात्मा की दृष्टि नाम और रूप पर नहीं होती अपितु वासुदेव सर्वमिति की होती है।उन्हें सब में ईश्वर ही नजर आते हैं। घर में पूजन करवाने आने वाले गुरु, हमारे पूजन गुरु हैं। हम किसी से कुछ भी सीखें वे सब किसी विद्या के गुरु हो सकते हैं। परंतु भव सागर से जीवन को पार लगाने वाला तत्वदर्शी महात्मा एक ही हो सकता है। जिनकी दृष्टि पदार्थों पर हो वे तत्वदर्शी गुरु नहीं होते। तत्व दर्शी गुरु हमारी तीन बातों से प्रसन्न होते हैं ।

पहली विनम्रता,दूसरी पात्रता,और तीसरी भूख (जिज्ञासा)

विनम्रता- सबसे पहले गुरु को दण्डवत प्रणाम करना। दण्डवत प्रणाम करने में सर्वप्रथम घुटने ज़मीन पर लगते है (बल समर्पण) फिर छाती (पूर्ण समर्पण ) फिर मस्तक (अहंकार समर्पण) हाथ जोड़ प्रणाम करना (कर्तत्व समपर्ण)फिर पैर पूरे फैले हुए (मानो दण्डवत शरीर जड़ हो गया हो। अब आप मेरी चेतना बन जाइये।

तत्व दर्शी गुरु कर्म नही भाव देखते हैं अगर गुरु से ज्ञान चाहिये तो गुरु के आगे हमेशा समर्पण का भाव होना चाहिये। मेरा गन्तव्य सिर्फ़ आप हैं मैं अपने आप को, आप को समर्पित करता हूँ। मैंने अपने अहंकार को आप को अर्पित कर दिया है। मैंने अपने कर्तव्यत्व को भी आप को दे दिया है। में जड़ हो गया हूँ, मेरी चेतना आप हैं। **दण्डवत में दण्डवत का भाव होना चाहिए।**

पात्रता - जो गुरु की सेवा करता है उसको ज्ञान की प्राप्ति होती है। कबीर दास जी कहते हैं ..

**कबीरा कुत्ता राम का, मोतिया मेरा नाम।**

**गले राम की जेवरी, जित खींचो तित जाऊँ!!**

अपने आप को गुरु (भगवान) को सौंप दो, फिर उनकी मर्ज़ी। भाव के लिए शबरी और भरत जी को याद करो। गुरु के मन की बात उनके बोलने से पहले ही समझ लो और अपना जीवन गुरु के वचनो पर समर्पित कर दो।

परिप्रश्नेन : अर्थात एक शिष्य को जिज्ञासु होना चाहिए। नचिकेत बनने पर ही धर्मराज जैसे गुरु मिलते हैं और प्रश्नों के उत्तर प्राप्त होते हैं। शास्त्र जानने वाले तो बहुत से ज्ञानी मिल जायेंगे। परन्तु तत्व को जानने वाले महात्मा बहुत कम मिलते हैं। अगर ऐसे महात्मा मिल जाएं तो उनकी शरणागति प्राप्त कर लेना चाहिये। वो हमें अपनी नाव में बिठा कर इस भव सागर से पार लगा देंगे। हमारी

इतनी क्षमता नही कि हम ख़ुद कुछ कर सकें,वो कृपा कर दें तो मैं कुपात्र होकर भी पार लग जाऊँगा। गुरुदेव की वन्दना में एक भाव पूर्ण भजन और उसकी लिंक

https://drive.google.com/file/d/1oBKSuaKxBwd5K_9PnhvG6kuiGEzQdZ52/view?usp=sharing

**4.35**

**यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहम्, एवं(म्) यास्यसि पाण्डव।**
**येन भूतान्यशेषेण, द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि॥35॥**

जिस (तत्त्वज्ञान) का अनुभव करने के बाद (तू) फिर इस प्रकार मोह को नहीं प्राप्त होगा, (और) हे अर्जुन ! जिस (तत्त्वज्ञान) से (तू) सम्पूर्ण प्राणियों को निःशेषभाव से (पहले) अपने में (और) उसके बाद मुझ सच्चिदानन्द घन परमात्मा में देखेगा।

विवेचन : भगवान कहते हैं, हे अर्जुन इस तत्व ज्ञान को जानने के बाद फिर से मोह को प्राप्त नही होते। एक बार सुनार को तत्व (सोने) का ज्ञान हो जाता है फिर वो भूल नही कर सकता। ऐसे ही जिसे संसार का तत्व मिल गया फिर वो मोह में नही बंधता। एक बार जिसने तत्व को समझ लिया फिर वो उस मार्ग से नहीं भटकता। आरम्भ में ज्ञानी को सिर्फ़ मै दिखता है। बाद में सिर्फ़ एक सच्चिदानन्द ब्रह्म ही दिखता है दूसरा कोई नही।

रहीम दास जी ने कहा है :

**जब मै था तब हरि नहि,अब हरि है मै नाहि ।**

**प्रेम गली अति सांकरी, जा में दो न समाई ।।**

**4.36**

**अपि चेदसि पापेभ्यः(स्), सर्वेभ्यः(फ्) पापकृत्तमः।**
**सर्वं(ञ्) ज्ञानप्लवेनैव, वृजिनं(म्) सन्तरिष्यसि॥36॥**

अगर (तू) सब पापियों से भी अधिक पापी है, (तो भी तू) ज्ञानरूपी नौका के द्वारा निःसन्देह सम्पूर्ण पाप-समुद्र से अच्छी तरह तर जायगा।

विवेचन : भले ही दुनिया में सबसे ज़्यादा पाप करने वाला हो फिर भी जो ज्ञान रूपी नौका में बेठ गया वो इस पाप रूपी भव सागर से पार हो जायेगा।

**4.37**

**यथैधांसि समिद्धोऽग्निः(र्), भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।**
**ज्ञानाग्निः(स्) सर्वकर्माणि, भस्मसात्कुरुते तथा॥37॥**

हे अर्जुन ! जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधनों को सर्वथा भस्म कर देती है, ऐसे ही ज्ञानरूपी अग्नि सम्पूर्ण कर्मों को सर्वथा भस्म कर देती है।

विवेचन : ज्ञान रूपी अग्नि सारे कर्मों के फल को जला कर नष्ट कर देती है। चाहे वो कर्म इस जन्म के हो या पूर्व जन्म के। जैसे अग्नि जलने पर सब तरह की लकड़ी को जला देती है। कोई फ़र्क़ नही पड़ता कि वह लकड़ी कितने वर्ष पुरानी है। एक बार अग्नि

प्रज्वलित हो गई तो सब भस्म कर देती है। इसी प्रकार एक घने जंगल में 1000 वर्षों से गहन अंधेरा हो पर अगर वहाँ कोई जाकर माचिस जला दे तो वहाँ प्रकाश हो जाता है। प्रकाश को कोई फ़र्क़ नही पड़ता की वह अंधेरा कितने वर्ष पुराना है। वैसे ही ज्ञान रूपी अग्नि जन्म जन्म के कर्मों के फल को जला कर भस्म कर देती है।

**4.38**

**न हि ज्ञानेन सदृशं(म्), पवित्रमिह विद्यते।**
**तत्स्वयं(म्) योगसंसिद्धः(ख्), कालेनात्मनि विन्दति॥38॥**

इस मनुष्यलोक में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसन्देह (दूसरा कोई साधन) नहीं है। जिसका योग भली-भाँति सिद्ध हो गया है, (वह कर्मयोगी) उस तत्त्वज्ञान को अवश्य ही स्वयं अपने आप में पा लेता है।

विवेचन : ज्ञान का काम है पवित्र करना। उदाहरण - (जब खाना खाने के बाद बर्तन धोते हैं, वो जब तक वायु के संपर्क मेंआकर सूख नही जाते वो पवित्र नही होते) कर्म योग में लगे मनुष्य के सब कर्मों को ज्ञान वायु पवित्र कर देती है और उसे भगवान की प्राप्ति हो जाती है।

**4.39**

**श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं(न्), तत्परः(स्) संयतेन्द्रियः।**
**ज्ञानं(म्) लब्ध्वा परां(म्) शान्तिम्, अचिरेणाधिगच्छति॥39॥**

(जो) जितेन्द्रिय (तथा) साधन-परायण है, (ऐसा) श्रद्धावान् मनुष्य ज्ञान को प्राप्त होता है (और) ज्ञान को प्राप्त होकर (वह) तत्काल परम शान्ति को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन : यह गीता का बहुत प्रसिद्ध श्लोक है भगवान ने बारहवें अध्याय में भी श्रद्धा का महत्व बताया है परन्तु भक्त को अश्रद्धा का दुष्परिणाम नहीं बताया। जब कि यहाँ भगवान ज्ञानी भक्त को अश्रद्धा का दुष्परिणाम बता रहे हैं।

**4.40**

**अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च, संशयात्मा विनश्यति।**
**नायं(म्) लोकोऽस्ति न परो, न सुखं(म्) संशयात्मनः॥40॥**

विवेकहीन और श्रद्धा रहित संशयात्मा मनुष्य का पतन हो जाता है। (ऐसे) संशयात्मा मनुष्य के लिये न तो यह लोक (हितकारक) है न परलोक (हितकारक) है और न सुख (ही) है।

विवेचन : गर कोई विवेकहीन क्षद्धा रहित हो जाये तो उससे संशय उत्पन हो जाता है। आरंभ में अत्यंत ज्ञानी होते हुए भी ऐसा होने पर उनका पतन निश्चित है। जो श्रद्धावान हैं उन पर श्रद्धा आवरण का कार्य करती है। उन पर किसी बात से फिर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। क्योंकि **श्रद्धावान लभते ज्ञानम।**

**4.41**

## योगसन्न्यस्तकर्माणं(ञ्), ज्ञानसञ्छिन्नसंशयम्।
## आत्मवन्तं(न्) न कर्माणि, निबध्नन्ति धनञ्जय॥41॥

हे धनञ्जय ! योग (समता) के द्वारा जिसका सम्पूर्ण कर्मों से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है (और) विवेक ज्ञान के द्वारा जिसके सम्पूर्ण संशयों का नाश हो गया है, (ऐसे) स्वरूप-परायण मनुष्य को कर्म नहीं बाँधते।

विवेचन : हे धनंजय! जिसने समष्टि यज्ञ द्वारा समस्त कर्मों को परमात्मा को समर्पित कर दिया है और जिसका ज्ञान और विवेक द्वारा संशय का नाश हो गया है उस पुरुष को कर्म नही बाँधते।

**4.42**

## तस्मादज्ञानसम्भूतं(म्), हृत्स्थं(ञ्) ज्ञानासिनात्मनः।
## छित्त्वैनं(म्) संशयं(म्) योगम्, आतिष्ठोत्तिष्ठ भारत॥42॥

इसलिये हे भरतवंशी अर्जुन ! हृदय में स्थित इस अज्ञान से उत्पन्न अपने संशय का ज्ञान रूप तलवार से छेदन करके योग (समता) में स्थित हो जा, (और युद्ध के लिये) खड़ा हो जा।

विवेचन : भगवान ने यहाँ तीन बातें बतलाई हैं :

पहला नौका से पार हो जाओ।

दूसरी ज्ञान की अग्नि से सब कर्मों को जला दो ।

तीसरी ज्ञान और विवेक रूपी तलवार से अपने सब संशयों और सब कर्मों का छेदन करके मुक्त हो जाओ।

और इस प्रकार भगवान अर्जुन के प्रश्न का उत्तर देकर अपनी बात समाप्त करते हैं।

## ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानकर्मसन्न्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में ज्ञानकर्मसन्यासयोग' नामक चौथा अध्याय पूर्ण हुआ।

---

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

**विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!**

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

---

**जय श्री कृष्ण !**

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

---

**हर घर गीता, हर कर गीता!**

आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

---

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

---

**|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||**

**||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||**